AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

भर्तृहरि की आत्मदृष्टि एवं चिंतन–मानवीय मूल्य के परिप्रेक्ष्य में

ORIGINAL ARTICLE

Author
डॉ. सुधीर कुमार
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
पंडित महादेव शुक्ल कृषक
स्नातकोत्तर महाविद्यालय
गौर, बस्ती, उत्तर प्रदेश, भारत

शोध सार

नैतिक तत्व और नैतिक मूल्य भूतकाल की उपलब्धियों का सार है, एवं वर्तमान युग की पथ. प्रदर्शिका है। नीति संबंधी अनेक शब्द एवं पद सूक्तियों के रूप में समाज में प्रचलित हो गए हैं, जो आप्तजन की भांति जटिल एवं गहन समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करके समाज के लिए वरदान के रूप में उपस्थित होते हैं। आपद् ग्रस्त मानव को ये सूक्तियां एवं लोकोक्तियां बंधुजन की भांति उचित मार्ग के अनुसरण की प्रेरणा देती हैं। आचार संबंधी इन नीति की उक्तियों के महत्व को जितना प्रतिपादित किया जाये उतना ही कम होगा। सरस्वती की आराधना करने वाले उन प्राचीन मनीषियों में से एक भर्तृहरि ने अपनी अगाध अंतश्चेतना एवं मनन के द्वारा उपलब्ध जीवन की गहन अनुभूतियों को समाज के लिए नीति के रूप में प्रस्तुत करके अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य किया है।

मुख्य शब्द

शतकतत्रय, श्रीमद्भगवद्गीता, हितोपदेश, इंद्रिय निग्रह, नीतिशास्त्र, ज्ञान तीर्थ.

भर्तृहरि के नाम से मुक्तक पद्यों के तीन संकलन मिलते हैं. श्रृंगार शतक , नीति शतक और वैराग्य शतक। तीनों शतक काव्य में लगभग एक एक सौ पद्य संकलित हैं। इनमें नामानुरूप ही विषयों का वर्णन हुआ है। संसार को अत्यंत गहराई से देखने का सौभाग्य भर्तृहरि को प्राप्त था। उस अनुभव के गूढ. मार्मिक पक्ष को ग्रहण करने तथा उसके अनुसार विचारों को अभिव्यक्त करने में वह पूर्णतः दक्ष थे। सच्चा लोकप्रिय कवि ख्याति के चरम पर तब पहुंचता है जब वह समाज के मध्य रहते हुए अपने अनुभवों के बल पर उसके अंतस् को समझने तथा कविता में छंदों के माध्यम से अभिव्यक्त करने में सिद्धहस्त होता है। इस दृष्टि से भतृहरि समाज के सच्चे पारखी हैं और लोक सामान्य के कवि हैं। इनकी विषय. वस्तु से उदात्त शिक्षा ग्रहण करने में सामर्थ्य प्राप्त होती है।

हमारे व्यक्तित्व का विकास मानव मूल्यों से ही होता है। यह मूल्य प्रत्यक्ष रूप से मानव जीवन को सामान्य सिद्धांतों के लिए त्याग करते हैं तो वे मूल्य कराते हैं। मूल्य शब्द संस्कृत के मूल धातु तथा 'यत्' प्रत्यय के योग से बना है। डॉ राधा कुमुद मुखर्जी ने मानवीय मूल्यों में मूल्य की विवेचना करते हुए कहा है कि, जो कुछ भी इच्छित है, वही मूल्य है। उनके विचार से लक्ष्य, आदर्श, प्रतिमान की संजीवित समयाकृति की मनोग्रंथि ही मूल्य है। उनकी धारणा में सामाजिक संरचना में सहायक सभी लक्ष्य और उद्देश्य, आदर्श और व्यवहार, मान–मर्यादा, प्रतिमान, व्यापक मानवीय आचरण, सुकृत कार्य, सात्विक विचार आदि मानवीय मूल्यों की पूर्व पिठिका है। मानवीय व्यवहार में मूल्य

शब्द का अर्थ सहज जीवन, शुद्ध आचरण, आत्म संयम, इंद्रियनिग्रह, आत्मशुद्धि के अर्थ में प्रयोग हुआ है। शील, संतोष, सत्य, प्रेम, अहिंसा, नैतिकता, लोकमंगल और लोक कल्याण की भावना भी मानवीय गुणों में ही सन्निहित है। मूल्यपरक/नीतिपरक होने का अर्थ हैः गुणवान होना। इन गुणों से हमें शक्ति प्रदान होती है। शक्ति का स्रोत होने के कारण हम सभी इन्हें मूल्य, नैतिकत्तव कहते हैं। वास्तविकता तथा 'मूल्य' मानव न्याय के लिए निर्धारित हेतु हैं जो जीवन को सार्थक बनाते हैं और मन में विश्वास, श्रद्धा, प्रेरणा, वफादारी, जिम्मेदारी, कर्तव्य भावना आदि उत्पन्न करते हैं। यदि मानव जीवन के संयम, समत्व भाव, अस्पृश्यता, सहयोग, स्वच्छता, दया, सर्वहित, धैर्य, विनम्रता, भक्ति, निष्ठा, कर्तव्य, अनुशासन, सहनशीलता, समानता, विवेकशीलता, मैत्री, निष्कपटता, वफादारी, दूरदृष्टि, सद्गुण, शिष्टता, कृतज्ञता, सहायता, परोपकार, मानवता, उन्मुखता, निष्ठा, न्याय, जीवों पर दया, राष्ट्रीय एकता, संचेतना, सेवाभाव, अहिंसा, देशभक्ति, शांति, शुद्धता, सहानुभूति, सत्य–सहिष्णुता, आत्मनियंत्रण, कर्तव्यनिष्ठा इत्यादि गुणों को निकाल दें तो मानव.जीवन निरर्थक और एक तटस्थ कार्यचक्र बन जायेगा।

संस्कृत वांग्मय में मानव मूल्यों को जिस प्रकार सामाजिक धरातल प्रदान किया गया है और मानव मन में आध्यात्मिकता की प्राप्ति की प्रेरणा दी गई, वह मानव की पूर्णता प्राप्ति की महत्वपूर्ण विशेषता है। संस्कृत वांग्मय के उपदेश और संदेश में मानवता की भावना अंतर्निहित है। हमारे ऋषियों.मुनियों, तपस्वियों तथा महामानव कवियों ने तपस्या एवं स्वाध्याय के द्वारा ऐसी विचारधारा व दृष्टिकोण दिया कि उससे आदर्शवादी दृष्टिकोण में क्रियान्वयन किया जा सकता हैः

''अनिकेतः स्थिरमतिभर्क्तिमान्मे प्रियो नरः।।''

श्रीमद्भगवद्गीता (12/13–19)

''अयम् निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।।''

हितोपदेश–मित्रलाभ (70, पूर्वार्द्ध)

मानवीय मूल्य अर्थात् नैतिक मूल्य का प्रश्न अत्यधिक अस्पष्ट है, अतः उसका निर्धारण करना सहज नहीं है। सामान्य जन की भाषा में यह कहा जा सकता है कि जो श्रेयस् नहीं है, काम्य नहीं है, वही अनैतिक है। अर्थात् जो लज्जाजनक, पीड़ादायक और अमंगलकारी है, वही अमानवीय है। समाज के लिए सुखकर और हितकर कृत्य ही नैतिकता की कोटि में आते हैं।

भर्तृहरि की दृष्टि में नैतिक मूल्य मानव को देवोपम बनाते हैं इसीलिए गीता में उन्हें 'दैवी सम्पत्' कहा गया है। 'देव' शब्द जो 'दिव्' धातु से निस्पन्न है, उसका अर्थ है देदीव्यमान होना। दैवी सम्पत् से युक्त मनुष्य में एक विशिष्ट प्रकाश होता है। यह दीप्ति है .उज्जवल चरित्र की, मानव मूल्य की। गीता का श्लोक यहां द्रष्टव्य हैः

''तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत।।''

श्रीमद्भगवद्गीता, 16/3

भर्तृहरि की दृष्टि में प्राणिमात्र में मानव संरचना का वैशिष्ट्य

भर्तृहरि की दार्शनिक दृष्टि में मानव सृष्टि की श्रेष्ठतम रचना है। मानव रचना से श्रेष्ठतर रचना अन्य नहीं है। ऐतरेय उपनिषद् में भी पुरुष (मानव) को समस्त कृतियों में सर्वोच्च स्थान दिया गया हैः

'पुरुषो वाव सुकृतम्।' ऐतरेयोपनिषद्

मनुष्य की मानवता ही एक ऐसी भावना है, जिसके कारण मनुष्य मानव बना रहता है। मानव से नीचे पशु. पक्षी हैं जिनमें चेतना का विकास तो दृष्टिगत होता है परंतु सत्–असत् के निर्णय का विवेक तथा शुभ अशुभ के अंतर का ज्ञान उन्हें नहीं होता है। वृक्षादि वनस्पतियों में अंतश्चेतना तो है परंतु उनकी वह्य अभिव्यक्ति नहीं है। अतः जब हम मानवी नीतियों के ह्रास की बात करते हैं तब पशु–पक्षियों के स्तर पर उतर आते हैं, अर्थात् हम सत्–असत् के विवेक कथा शुभ–अशुभ के ज्ञान से शून्य हो जाते हैं। एक तृतीय तत्व भी इन दोनों में सम्मिलित किया जा सकता

है, वह है, सौन्दर्य–बोध। ललित कलाओं की जो मनोवैज्ञानिक परीक्षा मानव कर सकता है वह पशु–पक्षियों के भाग की बात नहीं है। मानव नित्य–अनित्य, मत्र्य–अमर्त्य, नश्वर–अनश्वर में विवेक कर सकता है। यदि वह विवेक न कर सके और अनित्य के पीछे भागता रहे तो वह मानवता के विकसित स्तर के नीचे उतर आता है। भर्तृहरि का कथन है कि वस्तुतः मानवता पशुस्तरीय भूख से ऊपर उठकर मानसिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक भूख (जिज्ञासा) को प्रशांत करने में परिलक्षित होती है।

विश्व का ऐसा कोई वांग्मय नहीं जो मानव मूल्यों का संधारक न हो। भाषा का वाह्य कलेवर मानव–मूल्यों के शाश्वत एवं चिरंतन सिद्धांतों का ही चित्रांकन करता है और विश्वग्राम के जयघोष से मानव जाति को एक सूत्र में सूत्रित करता हैः

'उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।'

हितोपदेश–मित्रलाभ (70, पूर्वार्द्ध)

भर्तृहरि का शतकत्रय तो मानव–मूल्यों की अक्षय निधि है। वैसे वेद मानव–मूल्यों की उद्गम स्थली मानी जाती है। मानव मूल्यों की यह चिरन्तन धारा उपनिषद्, पुराण, धर्मशास्त्र, दर्शनशास्त्र, साहित्य आदि वांग्मय को पुण्य स्थली बनाते हुए 'ज्ञानतीर्थ' नाम से पूजित है। इसमें अवगाहन करने से मानव 'महामानव' की पदवी से सुशोभित होता है। अपने में आचार्यत्व का विकास करता है और व्यष्टि से समष्टि की ओर अग्रसर हो, मानव जाति का कल्याण करता है। नैतिक सिद्धांतों का ज्ञान नहीं, अपितु उसे जीवन में आत्मसात् करने वाला ही वरेण्य होता है। अतः संस्कृत वांग्मय में नैतिक मूल्यों के प्रयोग पक्ष पर बल दिया गया है।

संस्कृत साहित्य में धर्म, श्रृंगार आदि की सतत् प्रवाहशील धाराओं के साथ–साथ नीति की धारा भी प्रारंभ से ही अविरल रूप से बहती रही है। जीवन की गहन अनुभूतियों को भारत के प्राचीन मनीषियों ने काव्यमयी भाषा में जनता के कल्याण के लिए प्रस्तुत किया है। इस प्रकार नैतिक तत्व और नैतिक मूल्य भूतकाल की उपलब्धियों का सार है एवं वर्तमान युग की पथ–प्रदर्शिका है।

भर्तृहरि ने अपनी युवावस्था में श्रृंगार परक अनुभूतियों से अपने अंतस् को अभि सिंचित किया है। छंदोंबद्ध रूप में श्रृंगार शतक में लिपिबद्ध है। कवि ने यह रेखांकित किया है कि नवयौवन से बढ़कर अनर्थ का कोई स्थान नहीं है। सर्वथा विकार विहीन युवावस्था ही धन्य है। उन्होंने स्वीकार किया है कि स्वप्नवत् चंचल योग तथा भोग दो ही गति हैं।

वैराग्य शतक में कवि के विचार एवं व्यक्तित्व के दार्शनिक एवं आध्यात्मिक पक्ष स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं। इस शतक में कवि द्वारा अंतस् की एकाग्रता एवं हृदय की विशुद्धता को परम आवश्यक बतलाया गया है क्योंकि सभी अनैतिक.अनुचित कर्म अशांत मन तथा हृदय की व्याकुलता का ही दुष्परिणाम होता है। इसके विपरीत सुखानुभूति शांत और एकाग्रचित्त का उत्स होता है।

मानव समाज की विभिन्न समस्याओं एवं बाधाओं का समाधान भर्तृहरि के शतकतत्रय में वर्णित विषयवस्तु की विवेचना व अध्ययन से प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मानवीय मूल्य के परिप्रेक्ष्य में भर्तृहरि की आत्मदृष्टि एवं चिंतन उनके शतक काव्य में प्रस्फुटित हुयी हैं। असमय दृष्टि पथ में आने वाले दूषित कृत्यों एवं भावनाओं के विरुद्ध अपने विचार व्यक्त करने में भर्तृहरि ने कभी संकोच नहीं किया। यही कारण है कि नीतिपरक एवं मूल्यपरक सूक्तियां उनके शतककाव्यों में यत्र–तत्र सर्वत्र अनायास ही दृष्टिगोचर हो जाती हैं।

निष्कर्ष

निष्कर्ष स्वरूप हम कह सकते हैं कि शतकतत्रयकार के नैतिक उपदेश मानव आचरण के औचित्य–अनौचित्य, शुभ अशुभ है तथा उचित अनुचित कर्मों का निर्धारण करता है और मानव को परमश्रेय के पथ पर अग्रसर करता है। भर्तृहरि के शतकतत्रय नैतिक मानदंड, नैतिक सिद्धांत, आचरण के नियम या जीवन के वास्तविक आदर्श की पहचान एवं उसकी स्थापना करता है, जो मानव के कल्याण एवं उन्नति के लिए अत्यंत उपयोगी एवं आवश्यक है।

मानवीय मूल्य के परिप्रेक्ष्य में भर्तृहरि की आत्म दृष्टि एवं चिंतन उनकी रचनाओं लिपिबद्ध है जिनमें कल्याण का मार्ग प्रशस्त करते है, मानवता को वरण करने वाले मानवीय मूल्य प्रतिपादित हैं। निःसंदेह शतकतत्रय में प्रतिपादित सद्विचार और मानवीय नैतिक मूल्य आज भी हमारे सर्वांगीण विकास हेतु नितांत ही आवश्यक एवं सर्वथा ग्राह्य हैं। इनमें वर्णित और उपदेशित तथ्य तथा पथ–प्रदर्शक सद्विचार काल एवं देश की सीमा से परे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गैरोला वाचस्पति, *संस्कृत साहित्य का संक्षिप्त इतिहास,* पृष्ठ 634, प्रकाशन 1978।
2. *ऐतरेय उपनिषद्,* गीताप्रेस प्रकाशन, गोरखपुर।
3. *श्रीमद्भगवद्गीता,* गीता प्रकाशन, गोरखपुर।
4. त्रिपाठी शिव शंकर, *कवियों की लोक दृष्टि,* चौखंबा संस्कृत भवन, वाराणसी।
5. *काव्यों में नीति तत्व,* गीता प्रेस प्रकाशन, गोरखपुर।
6. त्रिपाठी श्रीकृष्ण मणि, *नीतिशतकम,* चौखंबा सुरभारती प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. मिश्र नित्यानंद, *नीति शास्त्र सिद्धांत एवं व्यवहार,* मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली 2009।
8. उपाध्याय दद्दन, भर्तृहरि शतकतत्रयम्, रमारंजनी टीका सहित, चौखंबा पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
9. चंद्र कृष्ण, भर्तृहरि के शतक काव्यों का साहित्यिक एवं दार्शनिक अध्ययन, चौखंबा संस्कृत भवन, नई दिल्ली।
10. कवठेकर प्रभाकर नारायण, संस्कृत साहित्य में नीति कथा का उद्भव एवं विकास, ब्रह्मवादिनी प्रेस, मद्रास 1972।

––==00==––